REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 9 | ISSUE - 12 | SEPTEMBER - 2020

जन–अवधारणा निर्माण में संचार माध्यमों की भूमिका : मास–मीडिया एवं सोशल मीडिया का विशेष सन्दर्भ

डॉ. विशाल श्रीवास्तव
असि. प्रोफेसर : हिन्दी, राजकीय महाविद्यालय, पचवस–बस्ती.

शोध सार :

इस शोध–पत्र की परिकल्पना एक सैद्धान्तिक एवं पर्यवेक्षणमूलक अध्ययन प्रक्रिया के अन्तर्गत की गयी है। जनसामान्य में अवधारणा के निर्माण में मास–मीडिया और सोशल मीडिया की भूमिका की अवधारणात्मक सम्भावनाओं को लेकर विचार और अध्ययन के जो प्रयास पूर्व में हुए हैं, उनको दृष्टिगत रखते हुए जब जनसंचार के माध्यमों के सामाजिक–राजनैतिक प्रभाव का विश्लेषण किया जायेगा तो निश्चय ही इस सन्दर्भ के जटिल संस्तरों की पहचान सम्भव होगी। यह विश्लेषण न केवल विषय की सैद्धान्तिक अवस्थिति के रूपायन के समक्ष उपस्थित समस्याओं के समाधान में सहायक होगा, अपितु एक सार्वभौम लोकतांत्रिक व्यवस्था में जन–सामान्य पर संचार के विभिन्न माध्यमों के व्यापक प्रभाव के सम्बन्ध में किये जाने वाले अध्ययनों और पर्यवेक्षणों के लिए प्रस्थान–बिन्दु का भी कार्य करेगा।

यह विचार आज आवश्यक है कि सूचना प्रौद्योगिकी और जनसंचार के बढ़ते परिवेश में जनता तक सूचनाओं की पहुँच को कैसे इन अर्थों में परीक्षित किया जाय कि भ्रामक अवधारणा निर्माण सम्भव न हो सके। विचार का बिन्दु यह भी है कि सोशल मीडिया द्वारा अपुष्ट खबरों के प्रसार को कैसे नियंत्रित किया जा सकता है। संवाद के केन्द्र में है कि क्या जनता पर नियंत्रण करने के उद्देश्य से सत्ता–प्रतिष्ठान के 'पोस्ट ट्रुथ' आधारित प्रचार–अभियान पर कोई नियमन सम्भव है और क्या जनता का भी इस सम्बन्ध में कोई उत्तरदायित्व निर्धारित किया जा सकता है। इस शोध–पत्र के निष्कर्षों से जनसामान्य में अवधारणा के निर्माण में मास–मीडिया और सोशल मीडिया की भूमिका को विश्लेषित और पारिभाषित करने में सहायता मिलेगी और भविष्य के अध्ययनों हेतु भी ये निष्कर्ष आवश्यक पूर्वपीठिका का कार्य कर पाने में सक्षम होंगे।

कुंजी शब्द : *जन–अवधारणा, संचार माध्यम, मास–मीडिया, सोशल मीडिया, जनमत निर्माण, एजेंडा–निर्धारण, फ्रेमिंग, डिजिटल संचार, मीडिया प्रभाव, फेक न्यूज, दुष्प्रचार, मीडिया साक्षरता, लोकतंत्र और मीडिया, नेटवर्क समाज, मीडिया नैतिकता*

आधुनिक समाज में सूचना को सबसे बड़ी शक्ति के रूप में माना गया है। अभी कुछ वर्ष पूर्व तक समाज में सूचना एवं संचार के माध्यम अत्यंत सीमित थे। सूचनाएँ लोगों तक देरी से पहुँचती थीं और सीमित मात्रा में पहुँचती थीं। साथ ही, उनका स्वरूप भी संक्षिप्त होता है और सामान्यतः विस्तारित विवरण या दृश्य लोगों तक बेहद ज़रूरी होने पर ही पहुँच पाते थे। रेडियो, टीवी और अख़बार जैसे माध्यमों पर सरकारी नियंत्रण होने के कारण सूचनाओं पर एक तरह की सेंसरशिप भी थी। हालिया समय में इण्टरनेट के आगमन और उसके लगातार सस्ते और तेज़ होते जाने ने संचार की दुनिया को एकदम बदल दिया है। तकनीक के प्रसार से अब

सूचना प्रदायी माध्यम हर व्यक्ति की पहुँच में हैं, फिर चाहे वह भौगोलिक, आर्थिक या सामाजिक रूप से पिछड़े क्षेत्र का निवासी ही क्यों न हो। यही कारण है कि आज व्यक्ति पहले की तुलना में अधिक सूचना समृद्ध है। टीवी पर निजी चैनलों और क्षेत्रीय बुलेटिनों की बढ़ती हुई संख्या ने मनुष्य की साधारणतम समस्याओं और मुद्दों को भी सम्बोधित किया है। इण्टरनेट के विस्तार रूप में अवतरित हुई सोशल मीडिया साइट्स ने तो पूरे परिदृश्य को आमूलचूल रूप से परिवर्तित कर दिया है, क्योंकि इनके आने के बाद व्यक्ति सूचित मात्र नहीं हुआ बल्कि उसको अभिव्यक्ति का भी एक वृहत्तर मंच प्राप्त हुआ।

समकालीन राजनैतिक और सामाजिक परिस्थितियों में सोशल मीडिया के आगमन ने 'जन–अवधारणा' के निर्माण की प्रक्रिया को पूरी तरह परिवर्तित कर दिया है। आज हमें तमाम तरह की सूचनाएँ लाखों–हज़ारों की संख्या में रोज उपलब्ध हो रही हैं, तकनीकी भाषा में कहें तो यह 'सूचना की बमबारी' है, किन्तु इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि इस सूचना की बमबारी से समाज का ज्ञान–समृद्ध होने का मार्ग स्थगित हो गया है। इन माध्यमों से प्रसारित सूचनाओं पर हम आँख मूँदकर विश्वास करने लगे हैं, और उनकी पुष्टि का कोई प्रयास भी हमारे द्वारा नहीं किया जाता। समकालीन समाज और राजनीति के तमाम संस्थानों ने इस सूचना को एक बड़े हथियार की तरह इस्तेमाल किया है। अपने उद्देश्यों और निहितार्थों को दृष्टिगत रखते हुए ये संस्थान जनसम्पर्क एजेंसियों का इस्तेमाल करते हैं और ऐसी सूचनाओं का प्रसारण करते हैं जिससे उनके मनमाफिक जनमत का निर्माण हो सके। प्रसिद्ध अमेरिकी विचारक नॉम चोम्स्की ने अपनी पुस्तक 'मैनुफैक्चरिंग कन्सेन्ट' में इस संदर्भ में बहुत विस्तार से उल्लेख किया है। आज के समय में इण्टरनेट और सोशल मीडिया की इस जन–अवधारणा निर्माण में बहुत बड़ी भूमिका है। बहुधा अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ग़लत और अपुष्ट सूचनाएँ प्रसारित की जा रही हैं, जिनसे जनता में भ्रामक अवधारणाओं का निवेश होता है। यही कारण है, कि आधुनिक समय में सच और झूठ के बीच का अंतर बेहद बारीक़ हो गया है और 'पोस्ट ट्रुथ' जैसे टर्म का विकास हुआ है। यूरोप और अमेरिका में 'पोस्ट ट्रुथ' का इस्तेमाल राजनीतिज्ञों द्वारा खूब किया गया है और अब भारत में भी इसके उदाहरण मिलने लगे हैं। प्राचीन समय में प्रचलित 'अफवाह' का यह एक तकनीकी विस्तार है, अंतर यह है कि अफवाह को चिह्नित करना आसान था किन्तु 'पोस्ट ट्रुथ' के आगे तो असल सत्य भी कई बार धुंधला नज़र आने लगता है। इन भ्रामक अवधारणाओं से केवल चुनावी जनमत का निर्माण होता हो, ऐसा भी नहीं है। कई बार अपुष्ट खबरों एवं वीडियोज़ के प्रसार के कारण दंगों और भीड़ द्वारा हत्या की घटनाएँ भी हो रही हैं। ऐसे में आधुनिक भारत में जनसामान्य में अवधारणा के निर्माण में मास–मीडिया और सोशल मीडिया की भूमिका की पड़ताल बेहद आवश्यक हो जाती है।

जन–अवधारणा निर्माण की प्रक्रिया एक जटिल, बहुआयामी और सतत विकसित होने वाली सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें जनसंचार माध्यम अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किसी भी समाज में व्यक्ति अपनी अधिकांश धारणाएँ प्रत्यक्ष अनुभव के बजाय विभिन्न संचार माध्यमोंकृजैसे समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन तथा वर्तमान समय में सोशल मीडियाकृसे प्राप्त सूचनाओं के आधार पर निर्मित करता है। यह प्रक्रिया सबसे पहले सूचना के चयन से शुरू होती है, जहाँ मीडिया अनेक घटनाओं में से कुछ विशेष मुद्दों को प्रमुखता देता हैय यही प्रक्रिया एजेंडा–निर्धारण कहलाती है, जो यह तय करती है कि समाज किन विषयों पर विचार करेगा। इसके बाद सूचना का प्रस्तुतीकरण होता है, जिसमें किसी घटना को विशेष दृष्टिकोण, भाषा और संदर्भ के साथ प्रस्तुत किया जाता है, जिससे उसका अर्थ और प्रभाव बदल सकता है।

इसके पश्चात सूचना का व्यापक प्रसार विभिन्न माध्यमों के जरिए जनसामान्य तक पहुँचता है, जहाँ लोग अपने सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और वैचारिक परिवेश के आधार पर उसका ग्रहण और व्याख्या करते हैं। यह व्याख्या एकरूप नहीं होती, बल्कि अलग–अलग समूहों में भिन्न–भिन्न रूप में विकसित होती है। आधुनिक डिजिटल युग में यह प्रक्रिया और भी गतिशील हो गई है, क्योंकि सोशल मीडिया ने संचार को द्विदिश बना दिया है, जहाँ लोग केवल सूचना के उपभोक्ता ही नहीं, बल्कि उत्पादक भी बन गए हैं। उनकी प्रतिक्रियाएँ, टिप्पणियाँ, शेयर और ट्रेंड्स जन–अवधारणा के निर्माण और पुनर्निर्माण में सक्रिय योगदान देते हैं।

जनसंचार माध्यम इस पूरी प्रक्रिया में न केवल सूचना का वाहक होते हैं, बल्कि वे सामाजिक विमर्श को दिशा देने, जनमत निर्माण करने तथा सांस्कृतिक मूल्यों को स्थापित करने का कार्य भी करते हैं। वे यह निर्धारित करते हैं कि कौन–सा मुद्दा महत्वपूर्ण है, किसे हाशिए पर रखा जाएगा और किस प्रकार समाज उसे समझेगा। इस प्रकार जनसंचार माध्यम लोकतांत्रिक व्यवस्था में जागरूकता फैलाने और नागरिकों को सशक्त

बनाने का कार्य करते हैं, किंतु साथ ही उनके माध्यम से फेक न्यूज, दुष्प्रचार, ट्रोलिंग और एल्गोरिद्मिक पक्षपात जैसी समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं, जो जन–अवधारणा को विकृत कर सकती हैं।

अतः यह स्पष्ट है कि जन–अवधारणा निर्माण केवल सूचना के आदान–प्रदान का परिणाम नहीं, बल्कि एक व्यापक सामाजिक–मानसिक प्रक्रिया है, जिसमें मीडिया की संरचना, प्रस्तुति, तकनीकी एल्गोरिद्म और जनसामान्य की सक्रिय भागीदारी सभी मिलकर कार्य करते हैं। इसलिए आवश्यक है कि जनसंचार माध्यमों में पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और नैतिकता सुनिश्चित की जाए तथा समाज में मीडिया साक्षरता का विकास किया जाए, ताकि जन–अवधारणाएँ संतुलित, आलोचनात्मक और यथार्थपरक रूप में विकसित हो सकें।

भारतीय परिदृश्य में मास–मीडिया का स्वरूप जितना व्यापक और प्रभावशाली हुआ है, उतना ही वह आलोचना का विषय भी बना है। ऐतिहासिक रूप से जहाँ मीडिया ने स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जनचेतना के निर्माण और औपनिवेशिक सत्ता के प्रतिरोध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, वहीं समकालीन भारत में उसका चरित्र काफी हद तक बदलता हुआ दिखाई देता है। प्रिंट, रेडियो और टेलीविजन जैसे पारंपरिक माध्यम आज बड़े कॉरपोरेट घरानों और राजनीतिक हितों से गहरे रूप में प्रभावित होते नजर आते हैं, जिससे उनकी निष्पक्षता और स्वायत्तता पर प्रश्नचिह्न खड़े होते हैं। सूचना का चयन और प्रस्तुतीकरण अब केवल सार्वजनिक हित से प्रेरित नहीं रह गया, बल्कि इसमें बाजारवाद, टीआरपी और सत्ता–समर्थन की प्रवृत्तियाँ स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हैं। परिणामस्वरूप, अनेक महत्वपूर्ण सामाजिक–आर्थिक मुद्देकृजैसे गरीबी, बेरोजगारी, श्रम–अधिकारकृहाशिए पर चले जाते हैं, जबकि सनसनीखेज और मनोरंजनपरक विषयों को प्रमुखता दी जाती है, जिससे जन–अवधारणा का निर्माण एकांगी और विकृत रूप में होने लगता है।

इसके अतिरिक्त, भारतीय मास–मीडिया में वैचारिक पक्षपात, 'मीडिया ट्रायल' और 'नैरेटिव निर्माण' जैसी प्रवृत्तियाँ भी तीव्र हुई हैं, जो लोकतांत्रिक विमर्श को प्रभावित करती हैं। कई बार मीडिया सत्ता के 'वॉचडॉग' के बजाय 'प्रोपेगैंडा टूल' के रूप में कार्य करता हुआ दिखाई देता है, जहाँ आलोचनात्मक पत्रकारिता की जगह पक्षधरता और ध्रुवीकरण को बढ़ावा मिलता है। इससे न केवल मीडिया की विश्वसनीयता घटती है, बल्कि समाज में विभाजन और भ्रम की स्थिति भी उत्पन्न होती है। साथ ही, डिजिटल युग में पारंपरिक मास–मीडिया और सोशल मीडिया के अंतर्संबंध ने फेक न्यूज और दुष्प्रचार को और अधिक जटिल बना दिया है, क्योंकि कई बार मुख्यधारा के माध्यम भी अप्रमाणित सूचनाओं को प्रसारित कर देते हैं। इस प्रकार, भारतीय मास–मीडिया का वर्तमान स्वरूप एक द्वंद्वात्मक स्थिति प्रस्तुत करता हैकृएक ओर वह लोकतंत्र का अनिवार्य स्तंभ है, वहीं दूसरी ओर उसकी संरचनात्मक सीमाएँ और वैचारिक झुकाव उसे आलोचना के घेरे में भी लाते हैं। अतः आवश्यक है कि मीडिया की स्वतंत्रता के साथ–साथ उसकी जवाबदेही, पारदर्शिता और नैतिक मानकों को भी सुदृढ़ किया जाए, ताकि वह वास्तव में जनहित और लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप कार्य कर सके।

पोस्ट–ट्रुथ की अवधारणा समकालीन वैश्विक और भारतीय परिदृश्य में जनसंचार माध्यमों की भूमिका को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। सामान्यतः पोस्ट–ट्रुथ उस स्थिति को दर्शाता है, जहाँ वस्तुनिष्ठ तथ्य जनमत निर्माण में उतने प्रभावशाली नहीं रह जाते, जितने भावनाएँ, व्यक्तिगत विश्वास और वैचारिक आग्रह होते हैं। अर्थात् सत्य की जगह 'अनुभूत सत्य' या 'निर्मित सत्य' अधिक प्रभावी हो जाता है। जनसंचार माध्यम, विशेषकर डिजिटल और सोशल मीडिया, इस प्रक्रिया को तीव्र करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। समाचारों और सूचनाओं का चयन, प्रस्तुतीकरण और बार–बार पुनरुत्पादन इस प्रकार किया जाता है कि वे दर्शकों की पूर्वधारणाओं के अनुरूप प्रतीत हों। इस संदर्भ में एल्गोरिद्म–आधारित प्लेटफॉर्म 'इको–चौंबर' और 'फिल्टर बबल' जैसी स्थितियाँ निर्मित करते हैं, जहाँ व्यक्ति केवल उन्हीं विचारों और सूचनाओं से घिरा रहता है जो उसके पहले से बने विश्वासों की पुष्टि करती हैं। परिणामस्वरूप, तथ्यात्मक सत्य की जगह भावनात्मक अपील और आधे–अधूरे तथ्यों पर आधारित नैरेटिव जन–अवधारणा को प्रभावित करने लगते हैं।

भारतीय संदर्भ में पोस्ट–ट्रुथ की प्रवृत्ति जनसंचार माध्यमों के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विमर्श में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। चुनावी राजनीति, धार्मिक और जातीय मुद्दों, तथा राष्ट्रीय सुरक्षा जैसे संवेदनशील विषयों पर मीडिया कवरेज कई बार तथ्यों से अधिक भावनात्मक उकसावे और वैचारिक ध्रुवीकरण पर आधारित होता है। मुख्यधारा के मास–मीडिया और सोशल मीडिया के अंतर्संबंध ने इस प्रवृत्ति को और भी जटिल बना दिया है, जहाँ फेक न्यूज, दुष्प्रचार और 'आईटी सेल' आधारित सूचनाएँ तेजी से फैलकर जनमत को प्रभावित करती हैं। कई बार मीडिया संस्थान भी प्रतिस्पर्धा और टीआरपी के दबाव में अप्रमाणित या आंशिक

तथ्यों को प्रसारित कर देते हैं, जिससे 'पोस्ट–ट्रुथ' संस्कृति को बढ़ावा मिलता है। इस स्थिति में सत्य और असत्य के बीच की रेखा धुंधली हो जाती है और जनता के लिए वास्तविक तथ्यों की पहचान करना कठिन हो जाता है। अतः यह आवश्यक है कि जनसंचार माध्यम अपनी नैतिक जिम्मेदारी को समझें, तथ्य–जांच को प्राथमिकता दें और नागरिकों में मीडिया साक्षरता को बढ़ावा दिया जाए, ताकि पोस्ट–ट्रुथ के इस दौर में एक संतुलित, विवेकपूर्ण और तथ्याधारित जन–अवधारणा का निर्माण संभव हो सके।

निष्कर्षतः यह स्पष्ट होता है कि जन–अवधारणा निर्माण की प्रक्रिया में संचार माध्यम– विशेषकर मास–मीडिया और सोशल मीडियाकृनिर्णायक और बहुआयामी भूमिका निभाते हैं। पारंपरिक मास–मीडिया जहाँ लंबे समय तक सूचना के प्रमुख और अपेक्षाकृत विश्वसनीय स्रोत के रूप में जनमत को दिशा देता रहा, वहीं सोशल मीडिया ने इस प्रक्रिया को अधिक तीव्र, सहभागी और विकेन्द्रीकृत बना दिया है। आज जन–अवधारणा केवल ऊपर से नीचे निर्मित नहीं होती, बल्कि यह एक अंतःक्रियात्मक प्रक्रिया बन चुकी है, जिसमें मीडिया संस्थान, तकनीकी एल्गोरिद्म और सामान्य नागरिक सभी सक्रिय भागीदार हैं। हालांकि, इस परिवर्तन ने लोकतांत्रिक संवाद को व्यापकता और विविधता प्रदान की है, परन्तु इसके साथ ही फेक न्यूज, दुष्प्रचार, ट्रोलिंग, इको–चौंबर और पोस्ट–ट्रुथ जैसी चुनौतियाँ भी गहराई से उभरी हैं, जो जनमत को भ्रमित और ध्रुवीकृत कर सकती हैं।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि संचार माध्यम केवल सूचना–प्रसार के उपकरण न रहकर उत्तरदायी और नैतिक जनसंवाद के मंच बनें। मीडिया संस्थानों को निष्पक्षता, तथ्यपरकता और सार्वजनिक हित को सर्वोपरि रखते हुए कार्य करना चाहिए, वहीं सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स को भी अपने एल्गोरिद्मिक ढाँचे में पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करनी होगी। साथ ही, नागरिकों में मीडिया साक्षरता का विकास अत्यंत आवश्यक है, ताकि वे सूचना के सत्य–असत्य का विवेकपूर्ण आकलन कर सकें और किसी भी प्रकार के दुष्प्रचार से प्रभावित न हों। इस प्रकार, यदि संचार माध्यम अपनी रचनात्मक और उत्तरदायी भूमिका का निर्वहन करें तथा समाज भी सजग और आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाए, तो जन–अवधारणा का निर्माण अधिक संतुलित, यथार्थपरक और लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप संभव हो सकेगा।

संदर्भ–ग्रंथ–सूची :

1. कुमार, केवल जे. (2012). 'मास कम्युनिकेशन इन इंडिया'. जयपुर : रावत पब्लिकेशन्स।
2. सिंह, जगदीश. (2015). 'जनसंचार माध्यम और समाज'. नई दिल्ली : ग्रंथशिल्पी।
3. त्रिपाठी, अजय. (2018). 'मीडिया और जनमत निर्माण'. इलाहाबाद : लोकभारती प्रकाशन।
4. यादव, राकेश. (2017). 'सोशल मीडिया : प्रभाव और संभावनाएँ'. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
5. Marshall McLuhan (1964). 'अंडरस्टैंडिंग मीडियारू द एक्सटेंशन्स ऑफ मैन'. न्यूयॉर्क : मैकग्रा–हिल।
6. Denis McQuail (2010). 'मैकक्वेल्स मास कम्युनिकेशन थ्योरी'. लंदन : सेज पब्लिकेशन्स।
7. Manuel Castells (2009). 'कम्युनिकेशन पावर'. ऑक्सफोर्ड : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. Noam Chomsky and Edward S. Herman (1988). 'मैन्युफैक्चरिंग कंसेंट : द पॉलिटिकल इकोनॉमी ऑफ द मास मीडिया'. न्यूयॉर्क : पैंथियन बुक्स।
9. Zizi Papacharissi (2015). 'अफेक्टिव पब्लिक्स : सेंटिमेंट, टेक्नोलॉजी एंड पॉलिटिक्स'. ऑक्सफोर्ड : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
10. Cass R- Sunstein (2017). 'रिपब्लिक : डिवाइडेड डेमोक्रेसी इन द एज ऑफ सोशल मीडिया'. प्रिंसटन : प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
11. Eli Pariser (2011). 'द फिल्टर बबल : व्हाट द इंटरनेट इज हाइडिंग फ्रॉम यू'. न्यूयॉर्क : पेंगुइन प्रेस।
12. Clay Shirky (2008). 'हियर कम्स एवरीबडी : द पावर ऑफ ऑर्गेनाइजिंग विदाउट ऑर्गेनाइजेशन्स'. न्यूयॉर्क : पेंगुइन प्रेस।
13. Terence A. Shimp (2010). 'एडवरटाइजिंग, प्रमोशन एंड अदर एस्पेक्ट्स ऑफ इंटीग्रेटेड मार्केटिंग कम्युनिकेशन्स'. मेसन : साउथ–वेस्टर्न सेंगिज लर्निंग।